उत्तराखण्ड में जनजातीय वर्गो की वैवाहिक परम्पराएँ – इतिहास के संदर्भ में

डॉ० संजय कुमार पन्त
एसोसिऐट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष इतिहास
के०जी०के० महाविद्यालय, मुरादाबाद, उ०प्र०
ईमेलः 13sanjaypant@gmail.com

सारांश

उत्तराखण्ड में जनजातीय वर्गो की वैवाहिक परम्पराओं के ऐतिहासिक संदर्भ में अवलोकन करने के पश्चात् कुछ तथ्य निकलकर सामने आते हैं कि जनजातीय वर्गो को छोड़कर अन्य किसी भी सवर्ण या असवर्ण वर्ग में जातीय पंचायत न तो है और न कभी रही। जातीय पंचायते उत्तराखण्ड के मध्य हिमालयी क्षेत्र के सामाजिक गठन की एक अनौखी मिसाल कही जा सकती है जहाँ समाजों में सामाजिक नियमन व समस्याओं का समाधान या तो गाँव के बुर्जुगों के हाथ में था, या फिर धर्माधिकारियों के हाथ में था। जातीय पंचायतों को ग्राम स्तर की छोटी पंचायतें भी कहा जा सकता है। दूसरा तथ्य जो सामने आता है। वह कन्या पक्ष से दहेज न लेकर इसके विपरीत वधू शुल्क देने की प्रथा देखी जा सकती थी और देखी भी जा सकती है। साथ ही स्त्रियों के पति को छोड़ने की स्वतन्त्रता के नियम की अधिक परिलक्षितता दृष्टिगोचर होती है जो कि कहीं न कहीं मातृसत्तात्मक व्यवस्था की ओर संकेत करती है इसमें आज की शिक्षा व सुधार प्रक्रिया मात्र अपवाद कही जा सकती है। पूर्वी शौका समाज में माँ की मृत्यु के पश्चात् सम्पत्ति का अधिकार पुत्री का था पुत्र का नही। पैतृक सम्पत्ति में कन्या का महत्वपूर्ण अधिकार था किन्तु जनजातीय समाज में विवाहों का सबसे बड़ा निशेधात्मक पहलू विवाह के अवसर पर अत्यधिक मात्रा में शराब का सेवन, परस्त्री अपहरण एवं ढांठी विवाह को कहा जा सकता है किन्तु इतना तो स्वीकार करना ही होगा कि जनजातीय समाज आज भी अपनी पहचान अपनी विशिष्ट परम्पराओं के निर्वहन से ही अस्तित्व में रखे हुए है, चाहे पहले से इसके स्वरूप में कितना ही परिवर्तन व परिवर्धन क्यों न आ गया हो।

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैः

डॉ० संजय कुमार पन्त

उत्तराखण्ड में जनजातीय वर्गो की वैवाहिक परम्पराएँ – इतिहास के संदर्भ में

शोध मंथन, जून 2018,
पेज सं0 204–209

Article No. 32
http://anubooks.com?page_id=581

प्रस्तावना

भारत का उत्तराखण्ड राज्य अपनी अनूठी सांस्कृतिक विरासत के लिए महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उत्तराखण्ड का सम्पूर्ण भू–भाग $28^0 44'$ और $31^0 25'$ उत्तरी अक्षांश और $77^0 45'$ तथा $81^0 1'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य 51125 वर्ग किमी0 क्षेत्रफल में विस्तृत है।[1] उत्तराखण्ड राज्य कुमाऊँ एवं गढ़वाल इन दो मण्डलों में विभक्त है। यह भू–भाग किसी एक जाति का नहीं वरन् कोल, किरात, खस, कश आर्य आदि जातियों का शरण स्थल रहा है। अतः स्वाभाविक ही है कि समय–समय पर आई विभिन्न जातियों व राजवंशों के शासन काल में यहाँ की मान्यताऐं भी प्रभावित हुई। भारत में प्रविष्ट होने वाली प्राचीन जातियों के सन्दर्भ में अनेक विद्वान कार्यरत है। गुहा ने अपने विश्लेषण के आधार पर भारत में निवासियों को ग्यारह नृशाखाओं में विभाजित किया है। निशाद, कोल, किरात तिब्बती, मंगोल आदिम रोम सागरीय, रोम सागरीय प्राच्य, दरदादि, खशादि शकादि एवं वैदिक आर्य।[2] डी0एन0 मजूमदार ने इन्हें आदिम डोम नृवंश, मंगोलाइन नृवंश एवं खश नृवंश इन तीन वर्गो में विभक्त किया है।[3] आर्यो के आगमन के पूर्व आर्येत्तर जातियों ने कुमाऊँ में विशिष्ट समाज एवं परम्पराओं को आधार दे दिया था। सांस्कृतिक दृष्टि से आर्यो का प्रसार इस बात का द्योतक है कि आर्येत्तर जातियाँ धीरे–धीरे शताब्दियों के अन्तराल में एक दूसरे में विलीन हो गई।

उत्तराखण्ड में जनजातीय समाज का जहाँ जिक्र आता है वहाँ शौका, थारू, बोक्सा, भोटिया, जौनसारी, नायक, बनरौत, खश आदि जनजातियों का उल्लेख आवश्यक हो जाता है। इन जनजातियों के अपने–अपने रीति रिवाज एवं परम्पराएँ है, जिनमें वैवाहिक परम्पराओं का प्रचलन यहाँ के जनजातीयतर वर्गो से भिन्न रहा है। यह ठीक है कि वर्तमान में इनमें अनेक इतिहास का विषय बन चुकी है। कुछ संक्रान्तिकाल से गुजर रही है तो कुछ पूर्णतः या आंशिक रूप से परिवर्तित हो चुकी है।

यह ठीक है कि वर्तमान में शिक्षा के व्यापक प्रसार के साथ–साथ सरकार द्वारा चलायी जा रही समाज कल्याण योजनाओं के फलस्वरूप लगभग सभी जनजातियों की वैवाहिक परम्पराओं में परिवर्तन आया है। किन्तु शेयरिंग[4], एटकिंसन[5], ट्रेल[6], पन्नालाल[7], रायपा[8], आर0एस0 रन्धावा[9] जोध सिंह नेगी[10] एवं एस0पी0 डबराल[11] ने जो विवरण उत्तराखण्ड के पूर्वी और पश्चिमी भोटान्तिक क्षेत्रों की जनजातियों का दिया है, उसमें पारस्परिक असमानता पायी गई है। पूर्वी भोटान्तिक क्षेत्रों में दारमा, चौदास और व्यास के शौके आते है। पश्चिमी भाटोन्तिक क्षेत्रों व जौहारी क्षेत्रों में तोलछा और मारछा आते हैं। जोहारी भोटान्तिकों में ढॉटी विवाह प्रचलित है। इस विवाह से पूर्व पति–पत्नी को कुछ शुल्क देकर ''ला–दावा'' लिखा देता है। इससे पत्नी को सामाजिक वैधता मिल जाती है। इसके न किए जाने पर ऐसी पत्नी से उत्पन्न सन्तान को तेलिया कहा जाता है तथा पत्नी को कोल्ती की संज्ञा दी जाती है। यह समाज में अत्यन्त हीन दृष्टि का परिचायक है।[12] एटकिन्सन ने ब्राह्मण वर्गीय भोटियाओं को छोड़कर अन्या भोटिया वर्गो में पुनर्विवाह और विधवा विवाह का उल्लेख किया है। पति की मृत्यु हो जाने पर पत्नी देवर के अथवा पति के किसी निकट सम्बन्धी से विवाह कर सकती है।[13] यह परम्परा खश राजपूतों से

मेल खाती है। तोलछा, मारछा जोहारियों में अपनी सन्तानों का विवाह यद्यपि माता–पिता करते है किन्तु विवाह के पश्चात दोनों अपनी स्वेच्छा से जीवन–यापन कर सकते है।[14] सामान्यतः इनमें विवाह के दो रूप देखे गये है। प्रथम तत्सत् और द्वितीय दमोला। इन दोनों विवाहों में पारस्परिक अन्तर यह है कि दूल्हा बारात के साथ कन्या के घर जाता है व कन्या को लाता है। किन्तु दामोला विवाह में केवल बाराती लोग जाते है और कन्या के पिता को कन्या शुल्क देकर लाते है। इसमें वर स्वयं नहीं जाता।[15]

इसके अतिरिक्त पूर्वी भोटान्टिक क्षेत्रों में थौचै दैमों[16], तहक्टीसीमो[17], उडाली दैमो[18], क्वल्ती कूर्मो[19] आदि विवाहों की परम्पराऐं रही हैं। शौका समाज में अविवाहिता कन्या के अलावा विवाहिता स्त्री के अपहरण की परम्परा भी थी। शौकाओं में सह पलायन (Elopment) विवाह की प्रथा भी देखी जा सकती थी।[20] पुण्डीर ने गढ़वाल के जौनपुर जनजातीय क्षेत्र में ओडाल (सहपलायन) की परम्परा की बात कही है[21] जिसे जातीय पंचायतें मान्यता दिया करती थीं। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण तथ्य सामने आता है कि शौकाओं में किसी प्रकार की दहेज की प्रथा नहीं थी।

जहॉ तक जौनसारी जनजाति के वैवाहिक परम्पराओं का प्रश्न है, उसका सर्व सामान्य रूप जोजड़ा कहा जाता है। इसे दर प्रथा या टके का विवाह भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गत कन्या और वर के अभिभावकों के बीच वधू मूल्य निर्धारित हो जाने पर पॉच या सात व्यक्ति बिना दूल्हें के लड़की को घर ले आते है और पूजा अनुष्ठान के बाद विवाह प्रक्रिया समाप्त हो जाती है। यहाँ पर बिना फेरों की बात के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि मनोनुकूल पति प्राप्त न होने पर लड़की को विवाह विच्छेद करने में किसी प्रकार की धार्मिक प्रतिबाध्यता नहीं होती है। ऐसी स्थिति में कन्या अपने मायके चली जाती है और बारम्बार बुलाये जाने पर भी ससुराल नहीं आती है। मनोनुकूल पति प्राप्त हो जाने पर ससुराल वालों को इसकी सूचना दे दी जाती है और छूट के लिये पंचायत बुलायी जाती है, जिसमें निर्णय लड़की के पक्ष में ही होता है। यह उल्लेखनीय है कि मनोनीत पति को पहले के पति को छूट की राशि देनी पड़ती है।

जहॉ तक थारू जनजाति के वैवाहिक परम्परा की महत्वपूर्ण बातों का प्रश्न है इसमें यह उल्लेखनीय है कि विवाह के जो प्रचलित रूप प्राप्त होते है, उसमें धर्म विवाह, क्रय विवाह, प्रेम विवाह, विधवा विवाह, साली विवाह और अपहरण विवाह प्रमुख हैं। विवाह केवल माघ माह के महीने में रविवार व बृहस्पतिवार को ही हो सकता है। विवाह में शराब का प्रचलन है। थारूओ में बहु पत्नी विवाह की प्रथा नहीं है, किन्तु विवाह के अवसर पर निभायी जाने वाली यह परम्परा कि वर के बहनोई को बिल्कुल नंगा कर दिया जाता है, अभद्र कही जा सकती है। यह प्रथा कब प्रचलन में आयी ?, कैसे आयी? और क्यों आयी ?, यह बता पाना अत्यन्त ही कठिन है।

जहॉ तक बोक्सा जनजाति की विवाह सम्बन्धी सामाजिक परम्पराओं का प्रश्न है इनमें खोरिया और छप्पर उखेलना व मछली पकड़ना महत्वपूर्ण है। खोरिया व छप्पर उखेलना, इस प्रथा के अन्तर्गत वधू को लेकर बारात के घर पहुँचने पर वर पक्ष की महिलाऐं उसके घर (झोपड़ी) के ऊपर चढ़कर वर एवं वधू के प्रति असामान्य प्रकार के व्यंग्यात्मक शब्दों का प्रयोग करती हुई उसकी छप्पर के घास–फूॅस को उखेलने का उपक्रम करती है। इसका निर्वाह अनिवार्यतः एक

परम्परा के अनुपालन के रूप में किया जाता है। इस प्रकार इस अवसर पर छप्पर को उखाड़ने की प्रथा का क्या आधार रहा होगा यह तो किसी को ज्ञात नहीं, पर लगता है इसके पीछे वर की नये घर के निर्माण की क्षमता एवं कौशल का परीक्षण रहा होगा।

इस समुदाय में इसी प्रकार की एक अन्य प्रथा है जिसका निर्वाह करना विवाह की पूर्णता का अभिन्न अंग माना जाता है, तथा जिसे 'मछली पकड़ना' कहा जाता है। इसके अन्तर्गत घर में वधू का स्वागत कर लेने के उपरान्त वर एवं वधू के समक्ष एक बड़े पात्र में पानी भर कर उसमें एक तांबे का सिक्के या किसी अन्य विशिष्ट सिक्के को डालकर उसे ऊपर से ढक दिया जाता है तथा उन दोनों के हाथ डालकर उसे निकालने को कहा जाता है, पर उनके इस प्रयास में घर की महिलाओं के द्वारा प्रबल प्रतिरोध किया जाता है। उनके इस प्रतिरोध के बाबजूद जो भी पहले उसे निकालने में सफल हो जाता है उसे विजयी घोषित किया जाता है। इस शक्ति परीक्षण, जिसमें प्रायः वर ही सफल होता है, के पश्चात ही विवाह की सम्पन्नता मानी जाती है।

उत्तराखण्ड की थाडू जाति से ही सम्बन्धित पश्चिमी नेपाल के थाडूओं में जो एक अनोखी प्रथा प्रचलित है वह यह है कि, कन्या को विदाई के समय एक जलता हुआ दीपक तथा एक विष से भरा प्याला प्रदान किया जाता है। इसे उसे राजपूत परम्परा का अवशेष माना जाता है जो कि कभी मध्यकाल के राजपूताने के राजपूतों में प्रचलित थी। इसका अभिप्राय था कि यदि मार्ग में किसी संघर्ष में उसका पति वीरगति को प्राप्त हो जाय तो वह दीपक की उस पवित्र अग्नि से पति की चिता जलाकर उसके साथ सती हो सके और दुर्भाग्य से यदि कहीं शत्रुओं के हाथ में पड़ जाय तो विषपान करके अपना प्राणान्त कर सके। क्योंकि जैसा कि कहा गया है कि थाडू नारियाँ स्वयं को राजपूताने की राजवंशी कहती है, अतः वे अपनी पुरातन राजपूती परम्परा का अनुपालन करने की दृष्टि से उपयुक्त प्रथा को जीवन्त रखे हुए हैं। परन्तु अब शिक्षा के प्रसार के साथ यह मात्र प्रथा का प्रतीक बनकर ही रह गयी है।

थारू समाज के समान ही बुक्सा समाज में वैवाहिक सम्बन्धों के लिए अपने ही समाज को वरीयता दी जाती है, किन्तु वर एवं वधू के चयन में गौत्र तथा खेड़ा (परिवार के मूल स्थान) एवं मातृपक्ष की तीन पीढ़ियों का परिहार आवश्यक माना जाता है। जहाँ तक वैवाहिक परम्पराओं का सम्बन्ध है उनमें अतीत में वैवाहिक प्रथाओं के लगभग सभी रूप क्रय विवाह, घर बैठाड़, देवर विवाह, सेवा विनिमय विवाह तथा सह पलायन विवाह प्रचलित रहे हैं, किन्तु इनमें से अब कुछ समाप्त हो चुके हैं। फिर भी कतिपय रूप से जो विशेष रूप से उल्लेखनीय है वे है – कि बुक्सा जनजाति में विधवा विवाह, देवर विवाह, साली विवाह, घर बैठाड़, पुनर्विवाह आदि सभी को सामाजिक मान्यता प्राप्त रही है। इसमें विधुर अथवा निःसन्तान व्यक्ति के द्वारा पुनर्विवाह किये जाने की स्थिति में साली विवाह को वरीयता दी जाती है। इसका कारण यह है कि जहाँ अन्य प्रकार के विवाहों में वधू मूल्य चुकाना आवश्यक होता है वहाँ साली विवाह के प्रसंग में वह नहीं दिया जाता है।[22] इस जाति में प्रायः पति की मृत्यु के उपरान्त स्त्री को देवर के साथ यौन अथवा विवाह सम्बन्ध स्थापित करने की स्वतन्त्रता होती है तथा देवर की स्थिति सामान्यतः स्त्री के द्वितीय पति की भाँति स्वीकार की जाती है।[23] बुक्सा समाज में बन्धुत्व की परिधि का निर्धारण

केवल सामाजिक मान्यता प्राप्त विवाहों के सन्दर्भो में ही किया जाता है। अतः ''घर बैठाड़ विवाह'' जो कि मात्र किन्हीं स्त्री– पुरूषों का एक संस्कार हीन संयोग होता है, को सामाजिक मान्यता न प्राप्त होने से इसमें अन्य मान्यता प्राप्त विवाहों के समान स्त्री के बान्धवों के साथ उस व्यक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी का भी कोई बान्धवीय सम्बन्ध नहीं होता है।[24]

जहाँ तक उत्तराखण्ड की वनरौत जनजाति की विवाह परम्पराओं का प्रश्न है इसके दो प्रकार सामने आते हैं। प्रथम क्रय विवाह और द्वितीय स्वेच्छिक विवाह। क्रय विवाह के अन्तर्गत कन्या मूल्य का आधा भाग उसके पिता को विवाह से पहले दे दिया जाता है और शेष भाग कन्या के पति के घर पहुँचने पर उसे दिया जाता है। स्वैच्छिक विवाह के अन्तर्गत युवा और युवतियाँ अपनी इच्छा से जीवन साथी चुन लेते हैं। यह महत्वपूर्ण बात है कि दहेज लड़की की ओर से दिया जाता है। तीन पीढ़ी तक वैवाहिक सम्बन्ध वर्जित है। विवाह के पश्चात पत्नी को विवाह विच्छेद और पुनर्विवाह की पूरी स्वतन्त्रता देखी जा सकती है।[25] एक अत्यन्त रोचक परम्परा का उल्लेख शेयरिंग ने किया है। शौका जनजाति के दारमा, चौदास और व्यास के गाँव में अविवाहित युवक–युवतियाँ एक साथ इकट्ठा हो जाते थे तथा अपना जीवन साथ चुन लिया करते थे। इनमें कुमार – कुमारी गृह बनाने की प्रथा थी। आज भी मध्य भारत में जहाँ कौल जाति के वंशज है उनमें विवाह से पूर्व प्रेम सम्बन्ध जोड़ने के लिए गोकुल या घुमकड़िया गृह बनाने की प्रथा है।[26] शेयरिंग ने इन गृहों को गृहस्थ जीवन के प्रारम्भिक शिक्षालय माना है।[27] कुमाऊँ के दूरस्थ भोटान्टिक इलाकों में आज भी भौटिया उत्सवों का आयोजन करते हैं और वर्ष भर में एकत्रित होकर अविवाहित युवक–युवतियाँ जीवन साथी का चुनाव कर लेते हैं।

इस प्रकार सम्पूर्ण विवरण से कुछ तथ्य निकलकर सामने आते हैं कि जनजातीय वर्गो को छोड़कर अन्य किसी भी सवर्ण या असवर्ण वर्ग में जातीय पंचायत न तो है और न कभी रही। जातीय पंचायते उत्तराखण्ड के मध्य हिमालयी क्षेत्र के सामाजिक गठन की एक अनौखी मिसाल कही जा सकती है जहाँ समाजों में सामाजिक नियमन व समस्याओं का समाधान या तो गाँव के बुर्जुगों के हाथ में था, या फिर धर्माधिकारियों के हाथ में था। जातीय पंचायतों को ग्राम स्तर की छोटी पंचायतें भी कहा जा सकता है। दूसरा तथ्य जो सामने आता है। वह कन्या पक्ष से दहेज न लेकर इसके विपरीत वधू शुल्क देने की प्रथा देखी जा सकती थी और देखी भी जा सकती है। साथ ही स्त्रियों के पति को छोड़ने की स्वतन्त्रता के नियम की अधिक परिलक्षितता दृष्टिगोचर होती है जो कि कहीं न कहीं मातृसत्तात्मक व्यवस्था की ओर संकेत करती है इसमें आज की शिक्षा व सुधार प्रक्रिया मात्र अपवाद कही जा सकती है। पूर्वी शौका समाज में माँ की मृत्यु के पश्चात् सम्पत्ति का अधिकार पुत्री का था पुत्र का नही। पैतृक सम्पत्ति में कन्या का महत्वपूर्ण अधिकार था किन्तु जनजातीय समाज में विवाहों का सबसे बड़ा निषेधात्मक पहलू विवाह के अवसर पर अत्यधिक मात्रा में शराब का सेवन, परस्त्री अपहरण एवं ढांठी विवाह को कहा जा सकता है किन्तु इतना तो स्वीकार करना ही होगा कि जनजातीय समाज आज भी अपनी पहचान अपनी विशिष्ट परम्पराओं के निर्वहन से ही अस्तित्व में रखे हुए है, चाहे पहले से इसके स्वरूप में कितना ही परिवर्तन व परिवर्धन क्यों न आ गया हो।

संदर्भ

1. वाल्दिया के0एस0, सोसियो कल्चरल आइडेन्टिटी प्रोफाइलस आफ रिसोर्सेज एण्ड प्लानिंग फार डेवलपमेन्ट आफ उत्तराखण्ड, वाल्दिया (सपा) उत्तराखण्ड टुडे, अल्मोड़ा 1996, पृ0 8
2. गुहा, रेसियल ऐलिमेन्टस इन दि पापुलेशन, आकसफोर्ड पृ0 114
3. मजूमदार, डी0 एन0, रेसेज एण्ड कल्चर्स आफ इण्डिया, बम्बई 1961 पृ0 39
4. शेयरिंग – नोट्स आन भोटियाज ऑफ कुमाऊँ एण्ड गढ़वाल, कलकत्ता, 1906 पृ. 15–37,
5. एटकिन्सन, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर 1974, दिल्ली जिल्द 3 भाग 1
6. ट्रेल – द स्टेस्टिकल स्कैच आफ कुमाऊँ, एशियाटिक रिसर्चेज, वाल्यूम 16, 137–234, 1928
7. पन्ना लाल, कुमाऊँ लोकल कस्टम्स, इलाहाबाद, 1920 पृ. 25–40
8. रायपा – सीमावर्ती जनजाति – शौका, धारचूला, 1974 पृ. 43–75
9. रन्धावा – द कुमाऊँ हिमालया आक्सफोर्ड, दिल्ली, 1970 पृ. 80–85
10. नेगी, जोध सिंह – हिमालयन ट्रेवल्स, दिल्ली, 1970 पृ. 70–75
11. डबराल, एस0पी0 उत्तराखण्ड का इतिहास भाग 7, दोगडडा, वि0 2055, उत्तराखण्ड के भोटान्तिक, दोगड़ा, 1965 पृ. 90–95
12. पन्ना लाल, पृ0 28–29
13. एटकिन्सन, पृ0 117–1199
14. डबराल, एस0पी0
15. पूर्वी भोटान्तिक क्षेत्रों में भ्रमण के दौरान प्राप्त सूचना के आधार पर।
16. मंगनी या सगाई विवाह।
17. अपनी इच्छा से विवाह करना।
18. अपहरण विवाह।
19. विवाहित लड़की का अपहरण कर लेना।
20. विस्तष्त विवरण के लिए देखिए डुंगर सिंह ढकरियाल संस्कृति संगम अंक 2, पिथौरागढ़ पृ. 25–30
21. पुण्डीर – जौनपुर के तीज त्यौहार, देहरादून 2002, पृ0 46
22. शर्मा डी0डी0 – उत्तराखण्ड का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास –3(1), 2003, पृ0 147–148
23. दानी, बी0डी0 बोक्सा जनजाति, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, 1984,पृ.124
24. शर्मा, डी0डी0 उपरोक्त पृ0 149
25. पिथौरागढ़ के अस्कोट क्षेत्र में भ्रमण के दौरान प्राप्त सूचना के आधार पर।
26. मजूमदार, डी0एन0 रेसेज एण्ड कल्चर आफ इण्डिया, पृ0 124–126
27. शेयरिंग, वेस्टर्न तिब्बत एण्ड ब्रिटिश वोर्डर लेंड, पृ0 106–107